



सुदामा चरित्र

नरोत्तमदास



प्रेषक – कौशलेन्द्र शर्मा





महाकवि नरोत्तमदास
(१५५० - १६०५)

|| कृष्णाय वासुदेवाय देवकी नन्दनाय च ||
|| नन्दगोप कुमाराय श्रीकृष्णाय वयं नमः ||



ॐ

श्री गनेस सुमिरन करूं, उपजै बुद्धि प्रकास।
सो चरित्र बरनन करूं, जासों दारिद नास॥

ज्यों गंगा जल पान ते, पावत पद निर्वान।
त्यों सिन्धुर मुख बात ते, मूढ़ होत बुधिवान॥

कृस्न मित्र कै जन्म को, ताको बरनन कीन्ह।
सुख सम्पति माया मिलै, सो उपदेस जु दीन्ह॥

बिप्र सुदामा बसत हैं, सदा आपने धाम।
भिक्षा करि भोजन करें, हिये जपैं हरि नाम॥

ताकी धरनी पतिव्रता, गहे वेद की रीति।
सुलज, सुसील, सुबुद्धि अति, पति सेवा में प्रीति॥

कही सुदामा एक दिन, कृस्न हमारे मित्र।
करत रहति उपदेस तिय, ऐसो परम विचित्र॥

महाराज जिनके हितू, हैं हरि यदुकुल चन्द।
ते दारिद सन्ताप ते, रहैं न क्यों निरद्वन्द॥

कह्यो सुदामा बाम सुनु, वृथा और सब भोग।
सत्य भजन भगवान को, धर्म सहित जप-जोग॥

लोचन-कमल दुखमोचन तिलक भाल,
स्रवननि कुण्डल मुकुट धरे माथ हैं।
ओढ़े पीत बसन गरे मैं बैजयन्ती माल,
संख चक्र गदा और पद्म धरे हाथ हैं॥
कहत नरोत्तम सन्दीपनि गुरु के पास,
तुमही कहत हम पढ़े एक साथ हैं।
द्वारिका के गए हरि दारिद हरेंगे पिय,
द्वारिका के नाथ वे अनाथन के नाथ हैं॥

सिच्छक हौं सिगरे जग को, तिय! ताको कहा अब देति है सिच्छा।
जे तप कै परलोक सुधारत, सम्पति की तिनके नहीं इच्छा॥
मेरे हिये हरि के पद पंकज, बार हजार लै देखि परिच्छा।
औरन को धन चाहिये बावरि, बाम्हन को धन केवल भिच्छा॥

दानी बड़े तिहुँ लोकन में, जग जीवत नाम सदा जिनको लै।
दीनन की सुधि लेत भली विधि, सिद्ध करौ पिय मेरो मतौ लै॥
दीनदयाल के द्वार न जात सो, और के द्वार पै दीन हवै बोलै।

श्री जदुनाथ से जाके हितू सो, तिहुँपन क्यों कन माँगत डोलै॥

क्षत्रिन के पन जुद्ध जुवा, सजि बाजि चढ़े गजराजन ही।
बैस के बानिज और कृसी पन, सूद को सेवन साजन ही॥
विप्रन के पन है जु यही, सुख सम्पति को कुछ काज नहीं।
कै पढ़ियो कै तपोधन है, कन माँगत बांभनै लाज नहीं॥

कोदों सवां जुरतो भरि पेट, न चाहति हौं दधि-दूध मिठौती।
सीत वितीत भयो सिसियातहि, हौं हठती पै तुम्हें न पठौती॥
जौ जनती न हितू हरि सों, तुम्हें काहे को द्वारिका ठेलि पठौती।
या घरतें न गयो कबहूँ, पिय! टूटो तवा अरु फूटी कठौती॥

छांड़ि सबै जक तोहि लगी बक, आठहु जाम यहै जिय ठानी।
जातहिं दैहैं लदाय लढाभरि, लैहों लदाय यहै जिय जानी॥
पैहों कहाँ ते अटारी अटा, जिनके विधि दीन्ही है टूटी सी छानी।
जो पै दरिद्र लिख्यो है लिलार, तो काहू पै मेटि न जात अजानी॥

पूरन पैज करी प्रहलाद की, खम्भ सों बांध्यो पिता जिहि बेरे।
द्रौपदी ध्यान धर्यो जबहीं तबहीं पट कोटि लगे चहुँ फेरे॥
ग्राह ते छूटि गयन्द गयो पिय, याहि सो है निश्चय जिय मेरे।
ऐसे दरिद्र हजार हरैं वे कृपानिधि लोचन-कोर के हेरे॥

चक्कवै चौकि रहे चकि से, तहाँ भूले से भूप कितेक गिनाऊं।
देव गन्धर्व औ किन्नर जच्छ से, सांझ लौं ठाढ़े रहैं जिहि ठाऊं॥
ते दरबार बिलोक्यों नहीं अब, तोही कहा कहिके समझाऊं।
रोकिए लोकन के मुखिया, तहँ हौं दुखिया किमि पैरुन पाऊं॥

भूल से भूप अनेक खरे रहौ, ठाढ़े रहैं तिमि चक्कवे भारी।
देव गन्धर्व औ किन्नर जच्छ से, मेलो करें तिनकौ अधिकारी॥
अन्तरयामी ते आपुही जानिहैं, मानौ यहै सिखि आजु हमारी।
द्वारिकानाथ के द्वा गए, सब ते पहिले सुधि लैहैं तिहारी॥

दीन दयाल को ऐसोई द्वार है, दीनन की सुधि लेत सदाई।
द्रौपदी तैं गज तैं प्रह्लाद तैं, जानि परी ना बिलम्ब लगाई॥
याही ते भावति मो मन दीनता, जौ निबहै निबहै जस आई।
जौ ब्रजराज सौं प्रीति नहीं, केहि काज सुरेसहु की ठकुराई॥

फाटे पट टूटी छानि खाय भीक मांगि मांगि,
बिना यज्ञ विमुख रहत देव तित्रई।
वे हैं दीनबन्धु दुखी देखि कै दयालु हैं हैं,
दै हैं कछु जौ सौ हौं जानत अगिन्तई॥
द्वारिका लौं जात पिया! एतौ अरसात तुम,

काहे कौ लजात भई कौनसी विचित्रई।
जौ पै सब जन्म या दरिद्र ही सतायौ तोपै,
कौन काज आई है कृपानिधि की मित्रई॥

तैं तो कही नीकी सुनु बात हित ही की,
यही रीति मित्रई की नित प्रीति सरसाइए।
चित्त के मिलेते चित्त धाइए परसपर,
मित्र के जौ जेइए तौ आपहू जेंवाइए॥
वे हैं महाराज जोरि बैठत समाज भूप,
तहाँ यहि रूप जाइ कहा सकुचाइए।
दुख सुख के दिन तौ अब काटे ही बनैगे भूलि,
बिपत परे पै द्वार मित्र के न जाइए॥

विप्रन के भगत जगत के विदित बन्धु,
लेत सब ही की सुधि ऐसे महादानि हैं।
पढ़े एक चटसार कही तुम कय बार,
लोचन अपार वै तुम्हें न पहिचानि हैं॥
एक दीनबन्धु, कृपासिंधु केरि गुरुबन्धु,
तुम सम को दीन जाहि निजजिय जानिहैं।
नाम लेत चौगुनी, गए ते द्वार सौगुनी सो,
देखत सहस्रगुनी प्रीति प्रभु मानिहैं॥

प्रीति में चूक नहीं उनके हरि, मो मिलि हैं उठि कण्ठ लगाय कै।
द्वार गए कछु दै हैं पै दै हैं, वे द्वारिका द्वारिका जू हैं सब लायकै॥
जै बिधि बीति गए पन दै, अब तो पहुँचो बिरधापन आय कै।
जीवन शेष अहै दिन केतिक, होहुँ हरी सें कनावड़ो जाए कै॥

हुजै कनावड़ो बार हजार लौं, जौ हितू दीन दयालु सों पाइए।
तीनिहु लोक के ठाकुर जे, तिनके दरबार न जात लजाइए॥
मेरी कही जिय मैं धरि कै पिय!, भूलि न और प्रसंग चलाइए।
और के द्वार सों काज कहा पिय, द्वारिका नाथ के द्वारे सिधाइए॥

द्वारिका जाहु जू द्वारिका जाहु जू, आठहु जाम यहै झक तेरे।
जौ न कहौ करिए तौ बड़ो दुख, जैये कहां अपनी गति हेरे॥
द्वार खड़े प्रभु के छरिया तहं, भूपति जान न पावत नेरे।
पांचु सुपारि तौ देखु बिचारि कै, भेंट को चारि न चांवर मेरे॥

यहि सुनि कै तब ब्राह्मणी, गई परोसिन पास।
पाव सेर चाउर लिए आई सहित हुलास॥

सिद्धि करी गनपति सुमिरि, बांधि दुपटिया खूंट।

मांगत खात चले तहां, मारग बाली-बूंट।।

तीन दिवस चलि विप्र के, दूखि उठे जब पांय।
एक ठौर सोए कहूँ, घास पयार बिछाय।।

अन्तरजामी आपु हरि, जानि जगत की पीर।
सोबत लै ठाढ़ो कियो, नदी गोमती तीर।।

प्रात गोमती दरस ते, अति प्रसन्न भो चित्त।
विप्र तहां असनान करि, कीन्हो नित्त निमित्त।।

भाल तिलक घसि कै दियो, गही सुमिरिनी हाथ।
देखि दिव्य द्वारावती, भयो अनाथ सनाथ।।

दीठि चकाचौंधि गई देखत सुबर्नमई,
एक ते आछे एक द्वारिका के भौन हैं।
पूछे बिनु कोऊ कहूँ काहू सों बात करै,
देवता से बैठे सब साधि साधि मौन हैं।।
देखत सुदामा धाय पौरजन गहे पांय,
कृपा करि कहो विप्र कहां कीन्हों गौन है।
धीरज अधीर के हरन पर पीर के,

बताओ बलबीर के महल यहाँ कौन है॥

दीन जानि काहू पुरुस, कर गहि लीन्हो आय।
दीन द्वार ठाढ़ो कियो, दीन दयाल के जाय॥

द्वारपाल द्विज जानि कै, कीन्ही दण्ड प्रनाम।
विप्र कृपा करि भाषिए, सकुल आपनो नाम॥

नाम सुदामा, कृस्न हम, पढ़े एकई साथ।
कुल पांडे वृजराज सुनि, सकल जानि हैं गाथ॥

द्वार पाल चलि तहं गयो, जहाँ कृस्न यदुराय।
हाथ जोरि ठाढ़ो भयो, बोल्यो सीस नवाय॥

सीस पगा न झँगा तन में, प्रभु! जानै को आहि बसे केहि ग्रामा।
धोती फटी-सी लटी-लुपटी अरु, पांय उपानह की नहिं सामा॥
द्वार खड़ो द्विज दुर्बल एक, रह्यो चकि सो बसुधा अभिरामा।
पूछत दीन दयाल को धाम, बतावत अपनो नाम सुदामा॥

बोल्यो द्वारपाल एक 'सुदामा नाम पांडे' सुनि,
छांडे काज ऐसे जी की गति जानै को?

द्वारिका के नाथ हाथ जोरि धाय गहे पांय,
भेटे भरि अंक लपटाय दुख साने को॥
नैन दोऊ जल भरि पूछत कुसल हरि,
विप्र बोल्यो विपदा में मोहि पहिचानै को?
जैसी तुम करी तैसी करी को दया के सिन्धु,
ऐसी प्रीति दीनबन्धु! दीनन सों मानै को?

लोचन पूरि रहे जलसों, प्रभु दूरि ते देखत ही दुख भेट्यो।
सोच भयो सुरनायक के, कलपद्रुम के हिय माझ खसेट्यो॥
कम्प कुबेर हिये सरस्यो, परसे पग जात सुमेरु समेट्यो।
रंक ते राउ भयो तबहीं, जबहीं भरि अंक रमापति भेट्यो॥

भेंटि भली विधि विप्र सों, कर गहि त्रिभुवनराय।
अन्तःपुर को लै गए, जहाँ न दूजो जाय॥

मनि मंडित चौकी कनक, ता ऊपर बैठाय।
पानी धर्यो परात में पग धोवन को लाय॥

राजरमनि सोरह सहस, सब सेवकन समीत।
आठों पटरानी भई, चितै चकित यह प्रीत॥

जिनके चरनन को सलिल, हरत जगत सन्ताप।

पांय सुदामा विप्र के धोवत ते हरि आप।।

ऐसे बेहाल बिवाइन सों, पग कंटक जाल लगे पुनि जोए।
हाय महा दुख पायो सखा तुम, आए इतै न कितै दिन खोए।।
देखी सुदामा की दीन दसा, करुना करि कै करुना-निधि रोए।
पानी परात को हाथ छुयौ नहिं, नैनन के जल सो पग धोए।।

धोय पाँय पट-पीत सों, पोंछत हैं जदुराय।

सतभामा सों यों कही, करो रसोई जाय।।

तन्दुल तिय दीने हते, आगे धरियों जाय।

देखि राज सम्पत्ति विभव, दै नहिं सकत लजाय।।

अन्तरजामी आपु हरि, जानि भगत की रीति।

सुहृद सुदामा विप्र सों, प्रकट जनाई प्रीति।।

कछु भाभी हमको दियो, सो तुम काहे न देत।

चाँपि पोटरी काँख में, रहो कहो केहि हेत।।

आगे चना गुरुमातु दए ते, लए तुम चाबि हमें नहिं दीने।

स्याम कह्यो मुसुकाय सुदामा सों, चोरी की बानि में हौ जू प्रवीने॥

पोटरी काँख में चाँपि रहे तुम, खोलत नाहिं सुधारस भीने।
पाछिली बानि अजौं न तजी तुम, तैसई भाभी के तन्दुल कीने॥

खोलत सकुचत गाँठरी, चितवत हरि की ओर।
जीरन पट फटि छुटि पख्यो, बिथरि गये तेहि ठौर॥

एक मुठी हरि भरि लई, लीन्हीं मुख में डारि।
चबत चबाउ करन लगे, चतुरानन त्रिपुरारि॥

कांपि उठी कमला मन सोचत, मोसों कहा हरि को मन ओंको?
ऋद्धि कँपी सब सिद्धि कँपी, नवनिद्धि कँपी बम्हना यह धौं को?
सोच भयो सुरनायक के, जब दूसरी बार लियो भरि झोंको।
मेरु डस्यो बकसे निज मेहिं, कुबेर चबावत चाउर चोंको॥

हूल हियरा में सब कानन परी है टेर,
भेंटत सुदामा स्याम चाबि न अघात ही।
कहै नरोत्तम रिधि सिद्धिन में सोर भयो,
ठाढी थर हरै और सोचे कमला तहीं॥
नाक लोग नाग लोक, ओक-ओक थोक-थोक,
ठाढे थरहरे मुख सूखे सब गात ही।

हाल्यो पर्यो थोकन में, लालो पर्यो लोकन में,
चाल्यो पर्यो चक्रन में चाउर चबात ही॥

भौन भरो पकवान मिठाइन, लोग कहैं निधि हैं सुखमा के।
साँझ सबेरे पिता अभिलाखत, दाखन चाखत सिन्धु छमा के॥
बाम्हन एक कोउ दुखिया सेर, पावक चाउर लायो समा के।
प्रीति की रीति कहा कहिए, तेहि बैठि चबात है कन्त रमा के॥

मुठी तीसरी भरत ही, रुकमिनि पकरि बांह।
ऐसी तुम्हें कहा भई, सम्पति की अनचाह॥

कही रुकमिनि कान में, यह धौं कौन मिलाप।
करत सुदामा आपु सों, होत सुदामा आप॥

क्यों रस में विष बाम कियो, अब और न खान दियो एक फंका।
विप्रहिं लोक तृतीयक देत, करी तुम क्यों अपने मन संका॥
भामिनि मोहि जेंवाइ भली विधि, कौन रह्यौ जग में नर रंका।
लोक कहै हरि मित्र दुखी, हमसों न सह्यो यह जात कलंका॥

भार्गव हू सब जीति धरा, दय विप्रन को अति ही सुख मानो।
विप्रन काढि दियो तुमको, निशि तादिन को बिसरो खिसियानो॥

सिन्धु हटाय करो तुम ठौर, द्विजन्म सुभाव भली विधि जानो।
सो तुम देत द्विजै सब लोक, कियौ तुमने अब कौन ठिकानो॥

भामिनि देव द्विजै सब लोक, तजौं हट मोर यहै मन भाई।
लोक चतुर्दस की सुख सम्पति, लागत विप्र बिना दुखदाई।
जाय रहैं उनके घर में, औ करौं द्विज दम्पति की सेवकाई।
तो मन माहि रुचै न रुचै, सो रुचै हम कौ वह ठौर सुहाई॥

भामिनि क्यों बिसरीं अबहीं, निज ब्याह समय द्विज की हितुआई।
भूलि गई द्विज की करनी, जेहि के कर सों पतिया पठवाई॥
विप्र सहाय भयो तेहि औसर, को द्विज के समुहे सुखदाई।
योग्य नहीं अर्द्धांगिनी है, तुमको द्विज हेतु इती निठुराई॥

यहि कौतुक के समय में कही सेवकनि आय।
भई रसोई सिद्ध प्रभु, भोजन करिये आय॥

विप्र सुदामहि न्हाय कर धोती पहिरि बनाय।
सन्ध्या करि मध्यान्ह की, चौका बैठे जाय॥

रूपे के रुचिर थार पायस सहित सिता,
सोभा सब जीती जिन सरद के चन्द की।

दूसरे परोसो भात सोंधो सुरभी को घृत,
फूले फूले फुलका प्रफुल्ल दुति मन्द की॥
पापर मुंगोरीं बरा व्यंजन अनेक भांति
देवता विलोक रहे देवकी के नन्द की।
या विधि सुदामा जु को आछे कै जेंवायें प्रभु,
पाछे कै पछ्यावरि परोसी आनि कन्द की॥

सात दिवस यहि विधि रहे, दिन दिन आदर भाव।
चित्त चल्यो घर चलन को, ताकौ सुनहु हवाल॥

दाहिने वेद पढ़ै चतुरानन, सामुहें ध्यान महेस धर्यो है॥
बाँए दोउ कर जोरि सुसेवक, देवन साथ सुरेस खर्यो है॥
एतइ बीच अनेक लिए धन, पायन आय कुबेर पर्यो है।
देखि विभौ अपनो सपनो, बापुरो वह बांम्हन चौंकि पर्यो है॥

देनो हुतो सो दै चुके, विप्र न जानी गाथ।
मन में गुनो गुपाल जू, कछु ना दीनो हाथ॥

वह पुलकनि वह उठि मिलन, वह आदर की बात।
यह पठवनि गोपाल की, कछु न जानी जात॥

घर घर कर ओड़त फिरे, तनक दही के काज।
कहा भयो जो अब भयो, हरि को राज-समाज॥

हौं आवत नाहीं हुतौ, बाहि पठायो ठेलि।
अब कहि हौं समुझाय कै, बहु धन धरौ सकेलि॥

बालापन के मित्र हैं, कहा देउँ मैं साप।
जैसो हरि हमको दियौ, तैसो पैइहैं आप॥

नौ गुन धारी छगन सों, तिगुने मध्ये जाय।
लायो चापल चौगुनी, आठों गुननि गंवाय॥

और कहा कहिए जहाँ, कंचन ही के धाम।
निपट कठिन हरि को हियो, मोको दियो न दाम॥

बहु भंडार रतन भरै, कौन करै अब रोष।
लाग आपने भाग को, काको दीजै दोस॥

इमि सोचत-सोचत झखत, आये निज पुर तीर।
दीठि परी एक बार ही, हय गयन्द की भीर॥

हरि दरसन से दूरि दुख, भयो गये निज देस।
गौतम ऋषि को नाउँ लै, कीन्हो नगर प्रवेस॥

वैसोइ राज समाज बनो गज, बाजि घने मन सम्भ्रम छायो।
कैधौ पर्यो कहूँ मारग भूलि, कि फेरि कै मैं अब द्वारिका आयो॥
भौन बिलोकिबे को मन लोचत, सोचत ही सब गांव मंझायो।
पूछत पांडे फिरे सब सों पर, झोपरी को कहूँ खोज न पायो॥

देव नगर कै जच्छ पुर, हौं भटक्यो कित आय।
नाम कहा यहि नगर को, सो न कहौ समुझाय॥

सो न कहौ समुझाय नगर वासी तुम कैसे।
पथिक जहाँ झंखाहिं तहाँ के लोग अनैसे॥

लोग अनैसे नाहिं, लखौ द्विज देव नगर तैं।
कृपा करी हरि देव, दियौ है देव नगर कै॥

सुन्दर महल मनि-मानिक जटिल अति,
सुबरन सूरज-प्रकास मानो दै रह्यौ।
देखत सुदामा जू को नगर के लोग धाये,
भेंटें अकुलाय जोई सोई पग छूवै रह्यौ॥

बाँम्हनी के भूसन विविध विधि देखि कह्यौ,
जैहाँ हौं निकासो सो तमासो जग ज्वै रह्यौ।
ऐसी दसा फिरी जब द्वारिका दरस पायो,
द्वारिका के सरिस सुदामापुर ह्वै रह्यौ॥

कनक दण्ड कर में लिए, द्वारपाल हैं द्वार।
जाय दिखायो सबनि लै, या हैं महल तुम्हार॥

कही सुदामा हँसत हौ, ह्वै करि परम प्रवीन।
कुटी दिखावहु मोहिं वह, जहाँ बाँझनी दीन॥

द्वारपाल सो तिन कही, कहि पठवहु यह गाथ।
आये विप्र महाबली, देखहु होहु सनाथ॥

सुनत चली आनन्द युत, सब सखियन लै संग।
नूपुर किंकिनि दुन्दुभी, मनहु काम चतुरंग॥

कही बाँम्हनी आय कै, यहै कन्त निज गेह।
श्रीजदुपति तिहुँ लोक में, कीन्हो प्रकट सनेह॥

हमै कन्त जनि तुम कहौ, बोलौ बचन सँभारि।

इहैं कुटी मेरी हती, दीन बापुरी नारि॥

मैं तो नारि तिहारि पै, सुधि सँभारिये कन्त।
प्रभुता सुन्दरता सबै, दर्ई रुक्मिनी कन्त॥

टूटी सी मड़ैया मेरी परी हुती याही ठौर,
तामे परी दुख काटे कहा हेम धाम री।
जेवर जराऊ तुम साजे सब अंग अंग,
सखी सोहैं संग वह छूछी हुती छामरी॥
तुम तो पटम्बर सो ओढ़े हौ किनारीदार,
सारी जरतारी वह ओढ़े कारी कामरी।
मेरी पंडिताइनि तिहारे अनुहारि पतो,
मोको बतलाओ कहाँ पाऊँ वाहि बामरी॥

ठाढ़ी है पँडाइन कहत मंजु भावन सों,
प्यारे परौं पाइन तिहारोई जु घरू है।
आए चलि हरौं श्रम कीन्हो तुम भूरि दुख,
दारिद गमायो यों हँसत गहो करू है॥
रिद्धि सिद्धि दासी करि दीन्हीं अविनासी कृस्न,
पूरन प्रकासी, कामधेनु कोटि बरू है।
चलो पति भूलो मति तुम्हें दीन्हों जदुपति,

सम्पति सो लीजिए समेत सुरतरु है॥

समुझायो निज कन्त को, मुदित गई लै गेह।
अन्हवायो तुरतहिं उबटि, सुचि सुगन्ध सो देह॥

पूज्यो अधिक सनेह सों, सिंहासन बैठाय।
सुचि सुगन्ध अम्बर रचे, वर भूसन पहिराय॥

सीतल जल अँचवाइ कै, पानदान धरि पान।
धर्यो आय आगे तुरत, छबि रवि-प्रभा समान॥

भरहिं चौंर चहुँ ओर ते, रम्भादिक सब नारि।
पतिवृता अति प्रेम सों ठाढ़ी करै बयारि॥

स्वेत छत्र की छाँह में, राजत शक्र समान।
बाहन गज रथ तुरँग वर, अरु अनेक सुभ वान॥

कामधेनु सुरतरु सहित, दीन्ही सबै बलबीर।
जानि पीर गुरु बन्धु हरि, हरि लीन्ही सब पीर॥

बिबिध भाँति सेवा करी, सुधा पियायो बाम।

अति विनीत मृदु वचन कहि, सब पूरो मन काम॥

लै आयसु तिय स्नान करि, सुचि सुगंध सब लाइ।
पूजी गौरि सोहाग हित, प्रीति सहित सुख पाइ॥

षटरस विविध प्रकार के, भोजन रचे बनाय।
कंचन थार मँगाय के, रचि रचि धरे बनाय॥

चन्दन चौकी डारि कै, दासी परम सुजान।
रतन जटित भाजन कनक, भरि गंगाजल आन॥

घट कंचन को रतन युत, सुचि सुगन्धि जल पूरि।
रच्छा धान समेत कै, जल, प्रकास भरपूरि॥

रतन जटित पीढा कनक, आन्यो बैठन काम।
मरकत मनि चौकी धरी, कछुक दूरि छबि धाम॥

चौकी लई मँगाय कै, पग धोवन के काज।
मनि पादुका पवित्र अति, धरी विविध विधि साज॥

चलि भोजन अब कीजिए, कहूँ दास मृदु भाखि।

कृस्न कृस्न सानन्द कहि, धन्य भरी हरि साखि॥

बसन उतारे जाइ कै, धोवत चरन सरोज।
चौकी पै छबि देत यों, जनु तनु धरे मनोज॥

पहिरि पादुका विप्र जब, पीढ़ा बैठे जाय।
रति ते अति छबि आगरी, पति सों हँसि मुसकाय॥

विविध भाँति भोजन धरे, व्यंजन चारि प्रकार।
जोरी पछिऔरी सकल, प्रथम कहे नहिं पार॥

हरिहिं समर्पो कन्त अब, कही मन्द हँसि बाम।
करि घंटा को नाद त्यों, हरि समर्पि लै नाम॥

अग्नि जेवाय विधान सों, वैस्व देव करि नेम।
बली काढ़ि जेवन लगे, करति पवन तिय प्रेम॥

बार बार पूछति प्रिया, लीजै जै रुचि होय।
कृष्ण कृपा पूरन सबै, अबैं परोसो सोय॥

जेइ चुके अँचवन लगे, करन गए विस्राम।

रतन जटिल पलका कनक, बुनी सुरेशम दाम॥

ललित बिछौना, बिरचि कै, पाँयत कसि के डोरि।
राखे बसन सुसेवकनि, रुचिर अतर सों बोरि॥

पानदान नेरे धर्यो, भरि वीरा छबि धाम।
चरन धोय पौढन लगे, करन हेत विश्राम॥

कोउ चँवर कोउ बीजना, कोउ सेवत पद चारु।
अति विचित्र भूसन सजे, गजमोतिन के हारु॥

करि सिंगार पिय पै गई, पान खाति मुसुकात।
कह्यौ कथा सब आदि तें, किमि दीन्हों सौगात॥

कही कथा सब आदि ते, राह चले की पीर।
सोवत जिमि ठाढ़ो कियो, नदी गोमती तीर॥

गए द्वार जिमि भाँति सों, सो सब करी बखान।
कहि न जाय मुख लाख सों, कृस्न मिले जिमि आन॥

कर गहि भीतर लै गए, जहाँ सकल रनिवास।

पग धोवन को आपुही, बैठे रमा निवास॥

देखि चरन मेरे चल्यो, प्रभु नयनन ते बारि।
ताही सों धोए चरन, देखि चकित नर नारि॥

बहुरि कही श्रीकृस्न जिमि, तन्दुल लीन्हें आप।
मेरे हृदय लगाइ कै, मेटे भ्रम सन्ताप॥

बहुरि करी जेवनार सब, जिमि कीन्हीं बहु भाँति॥
बरनि कहाँ लागि को कहौ, सब व्यंजन की पाँति॥

जादिन अधिक सनेह सों, सपन दिखायो मोहिं।
सो देख्यो परतच्छ ही, सपन न निसफल होहिं॥

बरनि कथा यहि विधि सबै, कह्यो आपनो मोह।
कृस्न कृपानिधि भगत हिय, चिदानन्द सन्दोह॥

साजे सब साज बाज बाजि गज राजत हैं,
विविध रुचिर रथ पालकी बहल हैं॥
रतन जटित सुभ सिंहासन बैठिबे को,
चौक प्रति कामधेनु कल्पतरु लहल हैं॥

देखि-देखि भूसण बसन दासि दासन के,
सुखपाल सासन के लागत सहल हैं।।
सम्पति सुदामाजू को कहाँ लौं दर्ई है प्रभु,
कहाँ लौं गिनाऊँ जहाँ कंचन महल हैं।।

बाजिसाला गजसाला दीन्हें गजराज खरे,
गजराज महाराज राजन-समाज के
बानिक विविध बाने मन्दिर कनक सोहैं,
मानिक जरे से मन मोहैं देवतान के।
हीरालाल ललित झरोखन में झलकत,
झिमि-झिमि झूमत झूमत मुकतान के।
जानी नहिं विपति सुदामाजू की कहाँ गई,
देखिए विधान जदुराय के सुदान के।।

कहूँ सपनेहूँ सुबरन के महल होते,
पौरि मन मण्डप कलस कब धरते?
रतन जटित सिंहासन पर बैठिबे को,
खरे हैं खवास मोपै चौंर कब ढरते?
देखि राजसामा निज वामां सो सुदामा कहैं,
कब ये भण्डार मेरे रतनन से भरते?
जो पै पतिबरता न देतो उपदेस तू तौ,

एती कृपा मो पै कब द्वारिकेस करते?

उठे पहिरि अम्बर रुचिर, सिंहासन पर आय।

बैठे प्रभुता देखि कै, सुरपति रह्यौ लजाय॥

कै वह टूटी सी छान हती, कहँ कंचन के अब धाम सुहावत।

कै पग में पनही न हती, कहँ लै गजराजहु ठाढ़े महावत।

भूमि कठोर पै राति कटै, कहँ कोमल सेज पै नींद न आवत।

कहि जुरतो नहिं कोदौ सवाँ, पभु के परताप ते दाख न भावत॥

धन्य-धन्य जदुवंस मनि, दीनन पै अनुकूल।

धन्य सुदामा सहित तिय, कहि सुर बरसहि फूल॥

§§××§§××§§